वैदिक पृथिवी स्थानीय देवता व गो

*डॉ. यशस्पति झा

गाय की पवित्रता में विश्वास, जो भारतीयता की प्रमुख विशेषता है, भार तोयों को उत्तराधिकार में, प्रागैतिहासिक युग से ही, जब वे ईरानवासियों से पृथक् नहीं हुए थे, मिला हुम्रा प्रतीत होता है । हिंसा धर्म के प्रति स्वाभाविक झुकाव ने उनको प्राणिमात्र के प्रति उदार बना दिया और इस उदारता के फलस्वरूप गो को सामाजिक और धार्मिक परम्पराओ तथा दैनन्दिन जीवन में इतना महत्त्व मिला जितना विश्व में कभी किसी भी जाति के लोगों द्वारा किसी पशु को कदा चित् ही मिला हो ।

गो को इस प्रकार जो अनुपम महत्व और लोकोत्तर सम्मान मिला उसके मूल में भारतीयता के प्राधारभूत ग्रंथों के उन प्रशस्ति वाक्यों को गिना जाना चाहिये जिनके द्वारा गो की महिमा की प्रतिष्ठा लोकजीवन में भली प्रकार हो गई थी।

ऋग्वेद से लेकर वर्तमान काल तक के साहित्य में गो की महिमा को प्रदर्शित करने वाले कथन मिलते हैं ।

ऋग्वेद में गो महिमा ऋग्वेद में गो के मातृत्व, दिव्यत्व आदि रूपों का स्पष्ट उल्लेख है। देवताओं की जननी, स्वसा तथा पुत्री के रूप में वह उल्लिखित है। उसे घनस्वरूपा, पोषिका और प्रकाशिका माना गया है। वह जेया (जीतने योग्य) और प्रदेया(दान देने योग्य) सर्व । गति या विश-शक्ति की प्रतीक होने से, वह देवताओं की शक्ति की

जलों का दिव्य स्वरूप आपो देवी के नाम से स्तुत हुम्रा है । निघण्टु में यास्का ने इन्हें पार्थिव देवों के अन्तर्गत हो गिना है।1 अथर्ववेद में गो और 'आप' को अभिन्न कहा गया है 2 तथा ऋषभ (वृषभ) को अपस् की प्रतिमा कहा गया है 13 ऋग्वेद में यह प्रभेद सांकेतिक रूप से दो सूक्तों का देवता 4 ग्रापः या गो को विकल्प से स्वीकार करके स्थापित किया गया जान पड़ता है

संभवतः आप देवियों व गो का अभेद सम्बन्ध स्थापित करने के लिए गो की तरह आपो देवियों के मातृत्व की उद्घोषणा अनेक मंत्रों में की गई है 15 गौओं को औषधि रूप में पाने का उल्लेख मिलता है । जलों के भैषज्य रूप का वर्णन मिलता है 6 इन्द्र जलों को मुक्त करता है और उनके मार्गों का निर्माता भी है 7 गो की तरह जल भी पयः संयुक्त (पयस्वान्) हैं। 8 आपो देवियाँ घृतसिक्त अन्न प्रदान करती है, अतः उनसे प्रार्थना की गई है कि वे घृत से आप्यायित करें

9 वे घृत, दुग्ध और मधु धारण करती हुई आती है 10 ऋत स्थान पर उनसे ऊधप्रदेश प्रकट करने की प्रार्थना भी की गई है। 111 गौओं की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे जल को दुग्धरूप प्रदान करती है। आपो देवियों से भी यह कार्य संयुक्त किया गया जान पड़ता है 112 इस अभिन्नता के प्रतिरिक्त इनके पार्थिव रूप (जल) को गो के पीने के लिए यज्ञ में आहूत किया जाता है 113 इस प्रकार आपो देवियाँ अपने स्थूल रूप से गो के लिए हितकारिणी व सूक्ष्म रूप से गो से अभिन्न हैं अग्नि पार्थिव देवों में प्रमुख हैं। गो के पार्थिव स्वरूप से उसका घनिष्ठ सम्बन्ध है। द्यलोक में सूर्य और अन्तरिक्ष में इन्द्र पति के ही रूप हैं । अतः अग्नि का वर्णन करते हुए स्तोता कभी सूर्य और इन्द्र से भी संयुक्त कर देता है। यहीं कारण है पार्थिव गोएँ अग्नि के उपर्युक्त रूपों से सम्बन्धित जान पड़ती हैं।

अग्नि और गो में प्रथम प्रकार का सम्बन्ध जन्यजनक भाव का है। अग्नि को गोओं(उत्रिया) का जनक कहा गया है 114 एक अन्य मंत्र के अनुसार अग्नि स्वयं जिस गो को उत्पन्न करते हैं उससे उत्पन्न पदार्थ पृथ्वी का धारण करते हैं 115 अन्यत्र अग्नि को वत्स रूप में उपस्थित किया गया है। प्रति दो माताओंो ं का पुत्र है, एक के ऊपर वह शयन करता है और दूसरी के पास वह अकेला ही (गगनमण्डल में) विचरण करने लगता है 116 ये दोनों माताएँ पृथिवी और द्युलोक हैं। एक (धावा)] वत्स ,(अग्नि,)को पोषित

करती है, दूसरी स्थान प्रदान करती है। 17 कदाचित् एक वत्स के प्रति अभिगमन करने वाली गौएँ भी ये ही हैं जो अनिन्द्य मार्ग का निर्माण करती और समस्त प्रज्ञाजनित कार्यों को अधिक मात्रा में धारण करती है। 18 दुरन्ताग्नि की अमृतवर्षी दो धेनुएँ भी उसको उत्पन्न करने वाली माताओं से अभिन्न हैं। 19

दूसरे प्रकार का सम्बन्ध साहचर्य सम्बन्ध कहा जा सकता है। अग्नि के उत्कृष्ट रूप से गौएँ संपृक्त रहती हैं। 20 रात्रि में प्रदीप्त अग्नि का गो यदि पशु सेवन करते हैं 21 साहचर्य सम्बन्ध से अग्नि गौधों का रक्षक भी बन गया है 122 गोपा23 विशेषण भी अग्नि की इस विशेषता (गोपालक या रक्षक होना) पर प्रकाश डालता है। मांगे यह शब्द अर्थ विस्तार के कारण रक्षक अर्थ में सामान्य बन गया। जिससे पति के लिए ऋतस्य गोपा 24 विशां गोपा, 25 सोमगोपा26 सतश्च भक्तश्च गोपा] (वर्तमान व भविष्य रक्षक) 27 आदि विशेषण प्रयुक्त हुए हैं।

अग्नि को उक्षा व वृषभ भी कहा गया है । हजार सींगों वाले वृषभ रूपतिपद्य स्थित सूर्यरूप से तथा स्वराव, सम्राट् विशेषणों से इन्द्र से अभिन्न हैं।

स्थान पर सरमा ने अग्नि के सहयोग से जाना था और अं गिराओं ने अरुण वर्गा गौधों को अग्नि सहायता से ही मुक्त किया 1 अग्नि इस बात की पूर्ण जानकारी रखते हैं कि कौन राष्ट्रको गौयों से वियुक्त करता है ? अग्नि उनको पूरी तरह नष्ट कर

देते हैं और कोई उन्हें बचाने वाला नहीं मिलता 1 इस प्रकार अग्नि की रक्षा व्यवस्था में उनकी गोए सदा प्रधर्षित रहती हैं हविप्रदात्री गौधों की वृद्धि के लिए अग्नि और सोम की स्तुति की गई है। अग्नि को गो के ऊधप्रदेश के समान ही अन्त को स्वादिष्ट बनाने वाला भी कहा गया है । अति को दुग्ध के समान प्रीणयिता भी कहा गया है।

अग्नि गोदाता के रूप में ऋग्वेद में बहुधा उल्लिखित हैं 1वे गोयुक्त धन के स्वामी हैं, अतः गोप्रधान धन देते हैं। यज्ञ को भी वे गोयुक्त करते हैं 1 गोदाता उन्हें अत्यन्त प्रिय हैं। अग्नि पृश्नि के ऊधप्रदेश से तेजस्वी दुग्ध का दोहन करते हैं वे गो को प्रशस्त बनाते हैं वे स्वयं गो भी हैं और अश्व भी। उन्हें वशा, उक्षा और गर्भिणी गो के माध्यम से आहूत किया जाता है इस प्रकार ऋग्वेद में अग्नि का गो से अनेक प्रकार से घनिष्ठ सम्बन्ध वर्णित है।

***व्याख्याता**
व्याकरण
राजकीय शास्त्री संस्कृत महाविद्यालय
अलवर (राज.)

सन्दर्भ

1 निघण्टु 513 निरुक्त 9/3/6
2 यदापो अघ्न्या इति - अथर्ववेद 7/83/2 या गावः ।
3 अपां यो अग्रे प्रतिमा बभूव - अथर्ववेद 9/4/2
4 ऐसे सूक्त हैं ऋग्वेद 4/58 और 10/19 के कुछ मंत्र
5 आपो ग्रस्मान्मातरः ऋग्वेद - 10/17/10 तथा 'अम्बय:' ऋ० 1/23/6 तुलनीय 10/30/10
6 ऋग्वेद 1/23/19, 20, 21, 10/9/6,7
7 वज्री वृषभो रशद ऋ० 7/49/1
8 ऋग्वेद 10/17 /14
9 धृतेन नो घृतप्वः पुनन्तु ऋ० 10/17/10 तुलनीय ऋ० 7/47/1
10 आयतीः घृतं पयांसि विभ्रतीमधूनि ऋ० 10/30/13
11 ऋतस्य योगे विष्यध्वमुधः । ऋ० 10/30111
12 पृचती मधुना पयः । ऋ० 1/23/16

13 अपो देवीरूपये यत्र गावः पिबन्ति नः । ऋग्वेद 1/23/18

14 ऋग्वेद 3/11/12

15 स्वावृग्देवस्यामृतं यदी गोरतो जातासो धारयन्त उर्वी ।
ऋग्वेद 10/12/13 [सायण ने गो का अर्थ जल भी किया है ।]

16 शयुः तरस्तादध नु द्विमाताऽबन्धनश्चरति वत्स एकः । ऋ० 355/6

17 धन्या वत्स भरति क्षेति माता । ऋ० 3/55/4 तुलनीय ऋ० 1/95/1

18 ऋग्वेद 1/146/3

19 उभगायस्य सवदुषे धेनु ऋ० 31614 तुलनीय गोजा (श्रग्नि) ऋ० 4/40/5

20 ऋग्वेद 1/95/8

21 त्वां यदग्ने पशवः समासते समिद्धमपि शर्वरे । ऋ० 3/91/7

22 त्राता गवामसि - ऋ० 1/3/11-12

23 ऋ० 2/91/2, 6,

24 ऋ.1/1/18

25 ऋ.1/94/5, 1/96/4

26 ऋ10/45/5,12 "

27 ऋ.1/96/7